



Amitrakshar International Journal

of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)

(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)

Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

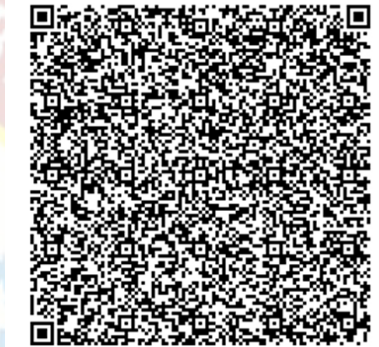
भारतीय दार्शनिक ज्ञान मीमांसा में प्रभाकर प्रणाली का अख्यातिवाद: एक समीक्षा

Singray Tudu¹

Abstract

In the Indian philosophical tradition, Mīmāṃsā philosophy holds a significant position, particularly in the field of epistemology. It primarily presents a systematic and philosophical examination of the authority of the Vedas, the concept of Dharma, and problems concerning the validity of knowledge. Mīmāṃsā philosophy has two major schools Bhāṭṭa Mīmāṃsā and Prābhākara Mīmāṃsā. Both traditions have made significant contributions to the study of epistemology, the theory of means of knowledge (pramāṇa), and the problems of truth and error. In particular, the Akhyātivāda of the Prābhākara school and the Viparītakhyātivāda or Anyathākhyāti of the Bhāṭṭa school are noteworthy contributions to the development of the Indian theories of error. According to Mīmāṃsā, the validity of knowledge is closely related to human practical activity and the knowledge of objects as they really are. Through Akhyātivāda, the Prābhākara school does not regard erroneous cognition as completely false knowledge; rather, it considers the absence of discrimination between perceptual cognition and memory to be a principal cause of error. On the other hand, the Bhāṭṭa tradition presents a distinctive analysis of the origin and determination of the validity and invalidity of knowledge. The objective of the present study is to provide a philosophical analysis of the epistemological perspective of Mīmāṃsā philosophy, its theory of pramāṇa, the concepts of prāmāṇya and aprāmāṇya, and its views concerning truth and error. Furthermore, through a comparative examination of the Bhāṭṭa and Prābhākara schools, the study seeks to clarify the contribution of Mīmāṃsā to Indian philosophy and its contemporary philosophical relevance.

Keywords: Epistemology, Pramāṇa, Prāmāṇya, Aprāmāṇya, Akhyātivāda, Theory of Error, Bhāṭṭa Mīmāṃsā, Prābhākara Mīmāṃsā



AIJITR- Volume-3, Issue-V, Sep-Oct 2026



Copyright © 2026 by author (s) and (AIJITR). This is an Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License (CC BY 4.0) (<https://creativecommons.org/licenses/by/4.0>)

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन का एक प्रमुख अंग ज्ञान मीमांसा है, जो यह विश्लेषण करता है कि हम किस प्रकार से ज्ञान प्राप्त करते हैं, उसे प्रमाणित करते हैं और सत्य-असत्य का भेद समझते हैं। भारतीय दर्शन में ज्ञान मीमांसा (Epistemology) को विस्तृत रूप से विभिन्न दार्शनिक प्रणालियों ने परिभाषित किया है, जिनमें मीमांसा दर्शन भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मीमांसा दर्शन मुख्य रूप से दो प्रमुख शाखाओं में विभाजित है-भट्ट मीमांसा और प्रभाकर मीमांसा। इन दोनों शाखाओं ने ज्ञान की उत्पत्ति और भ्रांति (Error) की समस्या पर अलग-अलग दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं। प्रभाकर मीमांसा की स्थापना आचार्य प्रभाकर ने की थी, जिन्होंने भ्रांति की व्याख्या करने के लिए अख्यातिवाद का प्रतिपादन किया। यह सिद्धांत यह स्पष्ट करता है कि भ्रम या भ्रांति तब उत्पन्न होती है जब किसी वस्तु का वास्तविक स्वरूप पूर्ण रूप से ज्ञात नहीं हो पाता और अधूरे ज्ञान के कारण व्यक्ति किसी वस्तु को दूसरी वस्तु के रूप में देखता है। इस विचारधारा का मूल यह है कि भ्रमित ज्ञान कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं है, बल्कि यह अपूर्ण और असंगत ज्ञान का परिणाम है। भारतीय दर्शन में भ्रांति की व्याख्या विभिन्न प्रणालियों ने भिन्न-भिन्न रूपों में की है। उदाहरण के लिए, अद्वैत वेदांत में अज्ञान को भ्रांति का मूल कारण माना गया है, जबकि न्याय और वैशेषिक दर्शन में भ्रांति की उत्पत्ति को विभिन्न तत्वों से जोड़ा गया है। मीमांसा दर्शन में, विशेष रूप से प्रभाकर प्रणाली में, भ्रांति की व्याख्या अख्यातिवाद के माध्यम से की गई है, जिसमें यह बताया गया है कि जब किसी वस्तु का ज्ञान अधूरा होता है, तभी भ्रम उत्पन्न होता है। अख्यातिवाद का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह भ्रांति को केवल इंद्रियों की त्रुटि नहीं मानता, बल्कि यह इसे संज्ञानात्मक (Cognitive) दोष के रूप में देखता है। जब कोई व्यक्ति रस्सी को साँप समझ लेता है, तो यह इसलिए नहीं कि उसकी आँखें त्रुटिपूर्ण हैं, बल्कि इसलिए कि उसके ज्ञान में अपूर्णता है। वह रस्सी

1. Research Scholar, The University Department of Philosophy, Ranchi University, Ranchi, Assistant Professor, Department of Philosophy, Narajole Raj College

DOI Link (Crossref) Prefix: <https://doi.org/10.63431/AIJTR/3.V.2026.13-17>

AIJITR, Volume 3, Issue –V, September - October, 2026, PP.13-17

Received on 1st September, 2026 & Accepted on 11th September, 2026,

Published: 15th September, 2026.

The statement "Copyright © by Author" (The author retains the copyright to the published article.)



Amitrakshar International Journal

of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)

(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)

Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

को देखता तो है, लेकिन उसकी चेतना में साँप का भी आभास होता है, जिससे भ्रम उत्पन्न होता है। मीमांसा दर्शन का मूल उद्देश्य वेदों की व्याख्या करना और कर्मकांड को तर्कसंगत रूप से स्थापित करना था, लेकिन इस प्रक्रिया में इसने ज्ञान मीमांसा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। प्रभाकर मीमांसा ने विशेष रूप से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि किसी भी ज्ञान का निर्माण किस प्रकार होता है और भ्रांति की प्रक्रिया किस प्रकार कार्य करती है। इस शोधपत्र में हम प्रभाकर प्रणाली के अख्यातिवाद की गहन समीक्षा करेंगे, इसकी अन्य भारतीय दार्शनिक प्रणालियों के साथ तुलना करेंगे और इसकी तार्किकता का विश्लेषण करेंगे। यह अध्ययन यह समझने में सहायक होगा कि भारतीय दर्शन में भ्रांति की अवधारणा किस प्रकार विकसित हुई और यह आधुनिक संज्ञानात्मक विज्ञान (Cognitive Science) और तर्कशास्त्र (Logic) के साथ किस प्रकार जोड़ी जा सकती है।

साहित्य समीक्षा

ज्ञान मीमांसा पर अनेक विद्वानों ने अपने शोध प्रस्तुत किए हैं। इस खंड में हम कुछ प्रमुख विद्वानों के कार्यों की समीक्षा करेंगे:

1. मांडन मिश्र (850 ई.) – ‘मीमांसा दर्शन का विवेचन’ में उन्होंने भ्रांति की अवधारणा को विस्तार से समझाया है और इसे ज्ञान की असंगति से जोड़ा है।
2. वाचस्पति मिश्र (9वीं शताब्दी) – ‘तत्त्वचिंतामणि’ में उन्होंने मीमांसा दर्शन और ज्ञान मीमांसा की गहन विवेचना की, और भ्रम की व्याख्या में प्रभाकर मत को संबोधित किया।
3. सुरेश्वराचार्य (10वीं शताब्दी) – उनके ग्रंथ ‘मीमांसा और अद्वैत’ में मीमांसा दर्शन का अद्वैत वेदांत के साथ तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।
4. उदयनाचार्य (11वीं शताब्दी) – उन्होंने ‘न्यायकुसुमांजलि’ में ज्ञान और भ्रांति पर प्रभाकर मत की आलोचना की और न्याय दर्शन के दृष्टिकोण से इसे चुनौती दी।
5. कुमारिल भट्ट (12वीं शताब्दी) – ‘श्लोकवार्तिक’ में उन्होंने प्रभाकर मीमांसा के कई सिद्धांतों का खंडन किया, विशेष रूप से अख्यातिवाद पर उनकी टीका महत्वपूर्ण है।
6. बलदेव उपाध्याय (1950) – ‘भारतीय ज्ञान मीमांसा’ में उन्होंने विभिन्न ज्ञान मीमांसात्मक प्रणालियों की तुलनात्मक व्याख्या प्रस्तुत की और प्रभाकर मत के योगदान को रेखांकित किया।
7. गोविंद चंद्र पांडे (1975) – ‘भारतीय दार्शनिक परंपरा’ में उन्होंने भारतीय दार्शनिक प्रणालियों का ऐतिहासिक अध्ययन किया और प्रभाकर मीमांसा को विश्लेषित किया।
8. के.सी. भट्टाचार्य (1990) – ‘भारतीय तर्कशास्त्र का अध्ययन’ में उन्होंने भारतीय दर्शन की विभिन्न तर्क प्रणालियों का अध्ययन किया और प्रभाकर मीमांसा के अख्यातिवाद को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में समझने का प्रयास किया।
9. डी.एन. शास्त्री (1997) – ‘माइंड एंड परसेप्शन इन इंडियन फिलॉसफी’ में उन्होंने भारतीय दर्शन की विभिन्न धाराओं में ज्ञान की उत्पत्ति और भ्रांति के स्वरूप को स्पष्ट किया।
10. बी.के. माथुर (2001) – ‘मीमांसा और तर्कशास्त्र’ में उन्होंने भारतीय ज्ञान मीमांसा के विभिन्न मतों की तुलना करते हुए प्रभाकर प्रणाली के योगदान को रेखांकित किया।
11. बी.के. मातिलाल (2002) – ‘परसेप्शन: एन इंडियन एंड एनालिटिकल फिलॉसफी’ में उन्होंने भारतीय और पाश्चात्य ज्ञान मीमांसा की तुलना की और प्रभाकर मीमांसा के अख्यातिवाद की प्रासंगिकता को समझाया।
12. आर.के. शर्मा (2010) – ‘भारतीय दार्शनिक परंपराएँ’ में उन्होंने भ्रांति की विभिन्न मीमांसात्मक व्याख्याओं का तुलनात्मक अध्ययन किया और अख्यातिवाद की सटीकता की समीक्षा की।
13. एस.एन. त्रिपाठी (2015) – ‘मीमांसा और आधुनिक तर्कशास्त्र’ में उन्होंने आधुनिक तर्कशास्त्र के संदर्भ में भारतीय दर्शन की भूमिका पर विचार किया और प्रभाकर मीमांसा की प्रासंगिकता को परखा।
14. दीपक वर्मा (2020) – ‘भारतीय ज्ञान मीमांसा और भ्रांति’ में उन्होंने भारतीय दर्शन में भ्रांति सिद्धांतों की तुलना करते हुए प्रभाकर प्रणाली की सीमाओं को उजागर किया।

समस्या विवरण

प्रभाकर प्रणाली का अख्यातिवाद भ्रांति की व्याख्या करता है, लेकिन इसे कई विद्वानों द्वारा चुनौती दी गई है। विभिन्न साहित्यिक स्रोतों के विश्लेषण से निम्नलिखित समस्याएँ उभरकर आती हैं:

अस्पष्टता का प्रश्न: वाचस्पति मिश्र (9वीं शताब्दी) और के.सी. भट्टाचार्य (1990) के अनुसार, अख्यातिवाद भ्रांति की सटीक व्याख्या करने में सक्षम नहीं है, क्योंकि यह भ्रम को केवल अपूर्ण ज्ञान मानता है।



Amitrakshar International Journal

of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)

(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)

Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

अन्य सिद्धांतों से तुलना: गोविंद चंद्र पांडे (1975) और बी.के. माथुर (2001) के अनुसार, प्रभाकर प्रणाली के अख्यातिवाद की तुलना में आत्मख्यातिवाद और अन्वयख्यातिवाद अधिक तार्किक प्रतीत होते हैं।

आधुनिक तर्कशास्त्र के संदर्भ में सीमाएँ: एस.एन. त्रिपाठी (2015) और दीपक वर्मा (2020) के अनुसार, आधुनिक संज्ञानात्मक विज्ञान में भ्रांति की व्याख्या अधिक जटिल है, जिसे अख्यातिवाद पूरी तरह स्पष्ट नहीं कर पाता।

यथार्थवाद और आदर्शवाद के बीच असमंजस: बलदेव उपाध्याय (1950) ने संकेत किया कि अख्यातिवाद यह निर्धारित करने में कठिनाई अनुभव करता है कि यथार्थ और भ्रांति के बीच सटीक अंतर क्या है।

अनुभव और स्मृति का अंतर: सुरेश्वराचार्य (10वीं शताब्दी) और आर.के. शर्मा (2010) के अनुसार, भ्रांति की व्याख्या करते समय अनुभव और स्मृति की भूमिका को स्पष्ट करने में अख्यातिवाद विफल रहता है।

अध्ययन के उद्देश्य

- प्रभाकर प्रणाली के अख्यातिवाद को विस्तार से समझना।
- अन्य भारतीय दार्शनिक प्रणालियों के साथ इसकी तुलना करना।
- भ्रांति की अन्य व्याख्याओं की तुलना में अख्यातिवाद की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।
- इस सिद्धांत की आधुनिक प्रासंगिकता को परखना।

विश्लेषण

प्रभाकर प्रणाली के अख्यातिवाद को विस्तार से समझना

भारतीय दार्शनिक परंपरा में ज्ञान मीमांसा (Epistemology) का महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें विभिन्न दर्शनों ने ज्ञान के स्वरूप, उसकी उत्पत्ति, और मान्यता पर विचार किया है। न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा और वेदांत दर्शनों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से ज्ञान की मीमांसा प्रस्तुत की है। इस संदर्भ में मीमांसा दर्शन की प्रभाकर प्रणाली का अख्यातिवाद एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है, जो ज्ञान की उत्पत्ति और भ्रम (Error) की व्याख्या करता है।

अख्यातिवाद की परिभाषा और स्वरूप

अख्यातिवाद मीमांसा दर्शन की प्रभाकर शाखा द्वारा प्रतिपादित भ्रम-सिद्धांत है। यह भ्रम (Error) के स्वरूप की व्याख्या करता है और यह मानता है कि भ्रम की स्थिति में वास्तविकता की सही पहचान नहीं हो पाती है। 'अख्याति' शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'अज्ञान' या 'असंबंध ज्ञान'। प्रभाकर मत के अनुसार, भ्रम इसलिए उत्पन्न होता है क्योंकि व्यक्ति वस्तु के सत्य और असत्य पक्षों को अलग-अलग नहीं कर पाता, जिससे ज्ञान में त्रुटि आ जाती है।

अख्यातिवाद की व्याख्या

प्रभाकराचार्य ने भ्रम को 'अख्याति' के रूप में स्वीकार किया है। उनके अनुसार, जब कोई व्यक्ति भ्रमित होता है, तो उसे सत्य और असत्य के बीच भेद नहीं कर पाता। उदाहरण के लिए, जब किसी व्यक्ति को रजताभास (चमक) वाली शुक्ति (सीपी) में चांदी का आभास होता है, तो वह उसे चांदी समझ लेता है। इस स्थिति में, व्यक्ति के मन में जो ज्ञान उत्पन्न होता है, वह न तो पूर्ण रूप से सत्य होता है और न ही पूर्ण रूप से असत्य, बल्कि वह दोनों के बीच की एक मिश्रित स्थिति होती है। प्रभाकराचार्य के अनुसार, इस प्रकार का भ्रम इसलिए उत्पन्न होता है क्योंकि ज्ञाता (Perceiver) वस्तु के सही गुणों को पहचानने में असमर्थ होता है। यह अज्ञान के कारण होता है, लेकिन यह पूर्ण रूप से असत्य भी नहीं होता।

अख्यातिवाद बनाम अन्य भ्रम-सिद्धांत

भारतीय दर्शन में भ्रम (Error) की व्याख्या विभिन्न मतों द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार से की गई है।

1. अख्यातिवाद (Prabhakara Mimamsa) – प्रभाकर मत के अनुसार, भ्रम वस्तु के असत्य और सत्य रूपों के बीच भेद न कर पाने के कारण उत्पन्न होता है।
2. अन्यख्यातिवाद (Nyaya-Vaisheshika) – न्याय और वैशेषिक दर्शन का मानना है कि भ्रम में एक वस्तु को दूसरी वस्तु के रूप में जाना जाता है।
3. आत्मख्यातिवाद (Advaita Vedanta) – अद्वैत वेदांत के अनुसार, भ्रम आत्मा के भीतर उत्पन्न होता है और बाहरी वस्तु का अस्तित्व नहीं होता।
4. अखंडाख्यातिवाद (Bhatta Mimamsa) – भट्ट मीमांसा के अनुसार, भ्रम सत्य और असत्य दोनों का मिश्रण नहीं होता, बल्कि एक विशेष प्रकार का ज्ञान होता है।

प्रभाकराचार्य का अख्यातिवाद भ्रम की एक विशिष्ट व्याख्या प्रस्तुत करता है, जिसमें यह बताया जाता है कि भ्रम वास्तविकता और अज्ञान के मिश्रण के कारण उत्पन्न होता है। यह सिद्धांत ज्ञान मीमांसा में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है और भारतीय दार्शनिक परंपरा में भ्रम की प्रकृति को समझने में सहायक



Amitrakshar International Journal

of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)

(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)

Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

होता है।

अन्य भारतीय दार्शनिक प्रणालियों के साथ तुलना

भ्रम की व्याख्या के लिए विभिन्न भारतीय दर्शनों ने अलग-अलग दृष्टिकोण अपनाए हैं।

भट्ट मीमांसा (कुमारिल भट्ट का "अतिरिक्तख्यातिवाद")

- कुमारिल भट्ट, जो मीमांसा दर्शन के एक अन्य प्रमुख आचार्य थे, ने अतिरिक्तख्यातिवाद नामक सिद्धांत प्रस्तुत किया।
- उनके अनुसार, भ्रम में दो तत्व होते हैं – सत्य और असत्य।
- जब कोई व्यक्ति रस्सी को सर्प समझता है, तो उसके ज्ञान में सत्य (रस्सी) और असत्य (सर्प की कल्पना) दोनों सम्मिलित होते हैं।
- यह सिद्धांत प्रभाकर के अख्यातिवाद से भिन्न है, क्योंकि इसमें भ्रम को एक स्वतंत्र मानसिक अवस्था माना गया है।

अद्वैत वेदांत (शंकराचार्य का "अनिर्वचनीयख्यातिवाद")

- अद्वैत वेदांत के आचार्य शंकराचार्य ने भ्रम की व्याख्या अनिर्वचनीयख्यातिवाद के माध्यम से की।
- वे मानते हैं कि भ्रमित वस्तु न तो पूर्णतः सत्य होती है, न पूर्णतः असत्य, बल्कि उसकी स्थिति अनिर्वचनीय (indescribable) होती है।
- रस्सी-सर्प के उदाहरण में, जब व्यक्ति सर्प देखता है, तो वह सर्प वास्तव में अस्तित्व में नहीं होता, लेकिन उसे पूरी तरह असत्य भी नहीं कहा जा सकता।

वैशेषिक और न्यायदर्शन (अख्यातिवाद के विरोध में "क्षणिकवाद")

- न्याय और वैशेषिक दर्शनों के अनुसार, भ्रम एक मानसिक दोष (Cognitive Error) के कारण उत्पन्न होता है।
- वे यह मानते हैं कि भ्रम वास्तविकता से अलग एक मानसिक विकृति है, जिसे सही ज्ञान प्राप्त करने से समाप्त किया जा सकता है।
- यह सिद्धांत प्रभाकर के अख्यातिवाद से भिन्न है क्योंकि न्याय-वैशेषिक मत में भ्रम को मानसिक विकृति माना गया है, जबकि प्रभाकर मत में इसे ज्ञान की असमर्थता माना गया है।

भ्रांति की अन्य व्याख्याओं की तुलना में प्रभाकर अख्यातिवाद की प्रभावशीलता का मूल्यांकन

भ्रांति की अन्य व्याख्याओं की तुलना में प्रभाकर अख्यातिवाद की प्रभावशीलता निम्नलिखित कारणों से स्पष्ट होती है:

- तार्किक आधार: यह सिद्धांत ज्ञान की अपूर्णता को भ्रांति का कारण मानता है, जो अन्य सिद्धांतों की तुलना में अधिक तार्किक प्रतीत होता है।
- अनुभव के अनुरूप: यह हमारे दैनिक जीवन में होने वाली भ्रांतियों के अनुरूप है, क्योंकि अधिकांश भ्रम अधूरे ज्ञान के कारण ही उत्पन्न होते हैं।
- इंद्रिय और मानसिक प्रक्रिया पर बल: प्रभाकर अख्यातिवाद यह स्पष्ट करता है कि हमारी इंद्रियाँ और मन कभी-कभी वस्तुओं की सही पहचान नहीं कर पाते, जिससे भ्रम उत्पन्न होता है।

प्रभाकर अख्यातिवाद की सिद्धांत की आधुनिक प्रासंगिकता

प्रभाकर मीमांसा का अख्यातिवाद यह मानता है कि भ्रांति का कारण अज्ञान (अविद्या) नहीं, बल्कि ज्ञान की अपूर्णता (अख्याति) है। आधुनिक संदर्भ में, यह सिद्धांत कई क्षेत्रों में प्रासंगिक सिद्ध होता है, विशेष रूप से मनोविज्ञान, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), निर्णय-निर्माण, फेक न्यूज, शिक्षा, और कानूनी प्रक्रिया में।

- मनोविज्ञान और संज्ञानात्मक विज्ञान – आधुनिक मनोविज्ञान बताता है कि मानव मस्तिष्क अधूरी जानकारी के आधार पर निष्कर्ष निकालता है, जिससे गलतफहमियाँ जन्म लेती हैं। यह ठीक वही बात है जो अख्यातिवाद कहता है।
- कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) और डेटा विज्ञान – जब AI सिस्टम अधूरी या पक्षपाती जानकारी पर प्रशिक्षित होते हैं, तो वे गलत परिणाम देते हैं। यह ठीक उसी तरह है जैसे इंसान अपूर्ण ज्ञान के कारण भ्रमित होता है।
- निर्णय-निर्माण और व्यावहारिक वित्त – निवेशक, उपभोक्ता और नीति-निर्माता जब अधूरी जानकारी पर निर्णय लेते हैं, तो वे गलत निष्कर्ष तक पहुँच सकते हैं। अख्यातिवाद इस प्रक्रिया को स्पष्ट करने में सहायक होता है।
- फेक न्यूज और सूचना का अधूरा ज्ञान – सोशल मीडिया पर झूठी खबरें और अधूरी जानकारी के कारण लोग भ्रमित हो जाते हैं, जो अख्यातिवाद की अवधारणा को सिद्ध करता है।
- शिक्षा और अधिगम प्रक्रिया – जब छात्र किसी विषय को अधूरे ज्ञान के आधार पर समझते हैं, तो उनके मन में भ्रांति उत्पन्न होती है। प्रभाकर अख्यातिवाद शिक्षा प्रणाली में इस समस्या को पहचानने में मदद करता है।
- कानूनी प्रक्रिया और न्यायिक निर्णय – अदालतों में जब अधूरी साक्ष्य प्रस्तुत होते हैं, तो न्यायाधीश कभी-कभी गलत निर्णय ले सकते हैं। यह भी अख्यातिवाद की अवधारणा को पुष्ट करता है।



Amitrakshar International Journal

of Interdisciplinary and Transdisciplinary Research (AIJITR)

(A Social Science, Science and Indian Knowledge Systems Perspective)

Open-Access, Peer-Reviewed, Refereed, Bi-Monthly, International E-Journal

प्रभाकर प्रणाली में अख्यातिवाद ज्ञान मीमांसा का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है, जो ज्ञान के भ्रम या अज्ञान की व्याख्या करता है। यह मत यह मानता है कि भ्रम ज्ञान का परिणाम नहीं, बल्कि अज्ञान का स्वरूप है, जिसमें ज्ञाता वस्तु के स्वरूप को सही ढंग से नहीं समझ पाता। प्रभाकर मत के अनुसार, ज्ञान और अज्ञान की स्थिति में भेद करना आवश्यक है, क्योंकि यही भेद सत्य और असत्य के विवेचन में सहायक होता है।

इस समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि अख्यातिवाद अन्य ज्ञान मीमांसीय सिद्धांतों, जैसे कि अनिर्वचनिय ख्यातिवाद (शंकर) और अख्यातिवाद (कुमारिल भट्ट) से भिन्न दृष्टिकोण रखता है। यह मत मानता है कि भ्रम में वस्तु का स्वरूप न तो पूरी तरह सत्य होता है और न ही पूरी तरह असत्य, बल्कि वह ज्ञाता की अज्ञानता के कारण उत्पन्न होता है।

अतः, प्रभाकर प्रणाली का अख्यातिवाद भारतीय दर्शन में ज्ञान और अज्ञान की जटिलताओं को समझने का एक सूक्ष्म दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह न केवल ज्ञान की प्रकृति और उसकी सीमाओं को स्पष्ट करता है, बल्कि अन्य ज्ञान मीमांसीय मतों के साथ दार्शनिक संवाद स्थापित करने में भी सहायक सिद्ध होता है।

संदर्भ सूची

1. मांडन मिश्र (850 ई.) – 'मीमांसा दर्शन का विवेचन'
2. वाचस्पति मिश्र (9वीं शताब्दी) – 'तत्त्वचिंतामणि'
3. सुरेश्वराचार्य (10वीं शताब्दी) – 'मीमांसा और अद्वैत'
4. बलदेव उपाध्याय (1950) – 'भारतीय ज्ञान मीमांसा'
5. गोविंद चंद्र पांडे (1975) – 'भारतीय दार्शनिक परंपरा'
6. के.सी. भट्टाचार्य (1990) – 'भारतीय तर्कशास्त्र का अध्ययन'
7. शर्मा, च. द. (1960). A critical survey of Indian philosophy. Motilal Banarsidass.
8. हिरियन्ना, म. (1932). Outlines of Indian philosophy. George Allen & Unwin.
9. राधाकृष्णन, स., & मूर, च. ए. (सं.). (1957). A source book in Indian philosophy. Princeton University Press.
10. राधाकृष्णन, स. (1923). भारतीय दर्शन (खंड 1). जॉर्ज एलन एंड अनविन।
11. राधाकृष्णन, स. (1927). भारतीय दर्शन (खंड 2). जॉर्ज एलन एंड अनविन।
12. दासगुप्त, स. (1922). A history of Indian philosophy (खंड 1). Cambridge University Press.
13. दासगुप्त, स. (1932). A history of Indian philosophy (खंड 2). Cambridge University Press.